ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

1857 dh Økafr esa ck¡nk dk ;ksxnku

डॉ0 रमा गुप्ता,
प्राचार्या, वी0प्र0मे0 महाविद्यालय,
अतर्रा (बांदा)

क्रान्ति होती है विपदा में–
सत्य का सूर्य अस्त जब हो, धर्म की ध्वजा ध्वस्त जब हो।।
व्यर्थ निर्दोश त्रस्त जब हो, न्याय की तुला व्यस्त जब हो।।
रहे आनन्द न जनता में, क्रान्ति0।।1।।
दुश्ट दुर्गण–दल उन्नत हों, स्वत्व भाुभ गुण न समुन्नत हो।
पुत्र सम प्रजा न पालित हो, विभेदक रीति प्रचालित हो।
रहे समभाव न नृपता में, क्रान्ति0।।2।।

कोई भी व्यक्ति या नागरिक जब दासता के बंधन में जकड़ जाता है उस समय वह घुटन का अनुभव करता है और वह बंधन मुक्त होना चाहता है। बंधन मुक्त से तात्पर्य सामाजिक और सांस्कृतिक नियमों का उल्लंघन नहीं है, बल्कि बाधक तत्वों द्वारा किये गये हस्तक्षेप से मुक्ति पाना है। भारतवर्श 11वीं भाताब्दी के प्रारम्भ में तुर्कों के आक्रमण झेलने लगा था, उसके पश्चात् यह तुर्कों के आधीन हो गया। तुर्कों से आजाद होने के लिए व्यापक संघर्श हुए किन्तु एकता के आभाव में हम असफल हुए। सन् 1526 के पश्चात् हम मुगलों के अधीन हो गये तथा 17वीं भाताब्दी के अन्त तक उनके अधीन बने रहे। 18वीं भाताब्दी के पश्चात् हमारा दुर्भाग्य था कि हम अंग्रेजों के अधीन हो गये। पहले अंग्रेजों की ईस्ट–इंडिया कम्पनी ने भाासन किया था तथा सन् 1860 के पश्चात् ब्रिटिश सरकार ने यहाँ भाासन किया। सन् 1947 तक हम बराबर उनके गुलाम बने रहे।

हमेशा यहाँ ऐसे व्यक्ति उत्पन्न हुये हैं जिन्होंने अपने प्राणों की आहुति देकर देश को आजादी दिलाने के प्रयत्न किये। बाँदा जनपद इस कार्य में कभी पीछे नहीं रहा। इस जनपद का इतिहास भाौर्यपूर्ण एवं चिरस्मरणींय है। युद्ध यहाँ की संस्कृति में घुला–मिला था। चन्देल युग में इसके उदाहरण उपलब्ध होते हैं। परमार्दि देव का युद्ध दिल्ली नरेश पृथ्वीराज और कुतुबद्दीन ऐबक से हुआ। यहाँ के आल्हा–ऊदल वीरता के प्रतिमूर्ति थे। युद्ध का कोई कारण हो न हो किन्तु मानव प्रतिश्ठा के लिए युद्ध आवश्यक हो गया था, यथा

"बातन–बातन बड़–बड़ हुईगे, बातन–बातन हुईगे रार,
बातन–बातन तेगा चलगे, बातन चमक उठी तलवार।।"

बाँदा की बेटी और जबलपुर की महारानी दुर्गावती ने अकबर की दासता स्वीकार नहीं की और उससे युद्ध किया। सन् 1728 में मुहम्मद बंगश ने बुन्देलखण्ड पर आक्रमण किया, इस युद्ध में बाजीराव पेशवा ने छत्रसाल को सहयोग प्रदान किया जिसके बदले में छत्रसाल ने अपने राज्य का 1/3 भाग बाजीराव को दे दिया और अपनी पुत्री मस्तानी का विवाह उससे कर दिया। इसके कारण बाँदा और कर्वी का सम्पूर्ण इलाका बाजीराव पेशवा के अधिकार में आ गया। मस्तानी के पौत्र अली बहादुर प्रथम का आगमन सन् 1787 में बाँदा हुआ और वे यहाँ के प्रथम नवाब हुये। उनके साथ हिमम्त बहादुर गोसाईं भी आये थे। अली बहादुर का स्वर्गवास कालिंजर दुर्ग में सन् 1802 में हो गया था। उसके पश्चात् भामशेर बहादुर द्वितीय यहाँ के नवाब हुये। वे पूना से पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर यहाँ आये थे। उनकी संधि अंग्रेजों से सन् 1804 में हुयी तथा सम्पूर्ण प्रशासनिक अधिकार अंग्रेजों के हाथ में आ गये। अंग्रेजों ने अपने लाभ के लिए सन्1810,1811,1812,1819,1823 तथा 1849 में लगानों में वृद्धि कर दी जिसके कारण जनता में असन्तोश फैल गया। इस बीच सन् 1822 में भामशेर बहादुर द्वितीय की मृत्यु के पश्चात् उनके

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

छोटे भाई जुल्फिकार बहादुर बाँदा के नवाब बने। वे 1849 तक बाँदा के नवाब रहे उसके पश्चात् अली बहादुर द्वितीय बाँदा के नवाब बने तथा 1857 की क्रांति में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी।

सन् 1857 की क्रांति के समय पेशवा के उत्तराधिकारी अमृत राव पेशवा कर्वी के जागीरदार थे, उसके पश्चात् सन् 1853 में विनायक राव पेशवा उत्तराधिकारी बने। इसके पश्चात् उनके पुत्र नरायण राव और माधाव राव उत्तराधिकारी बनें जिन्हें अंग्रेजों ने उत्तराधिकारी नहीं माना और उनकी जागीर तथा पेंशन जब्त कर ली। इसी समय बाँदा जनपद में अनावृश्टि और अकाल की स्थिति पैदा हो गयी। बाँदा जनपद के उद्योग चरमरा गये, रूई की मण्डी समाप्त हो गयी, जिसके कारण बाँदा जनपद में क्रांति की पृश्ठभूमि बनी।

बाँदा में क्रांति का भुभारम्भ 8 जून 1857 को हुआ। सर्वप्रथम यह क्रांति कर्वी जनपद के मऊ तहसील में शुरू हुई। इस समय इलाहाबाद केन्द्रीय जेल के कैदी आजाद होकर मऊ क्षेत्र में आ गये थे। उन्होंने अंग्रेज पुलिस अधिकारियों पर आक्रमण भुरू कर दिये। 9 जून को यह क्रांति बबेरू में फैल गयी। यहाँ का खजाना लूटा गया इसके पश्चात् यह क्रांति चिल्ला, पैलानी और यहाँ के मुस्लिम गाँव में फैली। 11 जून को यह क्रांति सम्पूर्ण बाँदा भाहर में फैली। यहाँ की फौज ने अंग्रेजों से विद्रोह कर दिया। 12 जून को अंग्रेजों की कोठियों में आग लगाई गयी। जो बाद में जरैली कोठी की घटना के नाम से प्रसिद्ध हुयी। इस घटना से अंग्रेज इतना घबरा गये वे बाँदा छोड़कर नागौर होते हुये इलाहाबाद चले गये। 14 जून को नवाब अली बहादुर द्वितीय यहाँ के स्वतंत्र भाासक घोशित कर दिये गये। इन्होंने स्वतंत्र राज्य कायम किया। क्रांतिकारियों ने इनका समर्थन किया। इस समय क्रांतिकारियों का नारा था–

"खल्क खुदा का मुल्क बादशाह का, हुक्म नवाब का।"

कुछ सरकारी कर्मचारी जो अंग्रेजों के मुलाजिम थे वे नवाब के मुलाजिम बन गये। इनमें डिप्टी कलेक्टर सरदार मुहम्मद खान भी थे।

सन् 1857 की क्रांति कर्वी से प्रज्जवलित हुयी, जिससे भयभीत होकर कर्वी का ज्वाइंट मजिस्ट्रेट कुकरैल बाँदा आया। 15 जून सन् 1857 को जब वह नवाब अली बहादुर द्वितीय से मिलने जा रहा था, उस समय क्रातिंकारियों ने नवाब के महल के निकट उसे मार डाला। नवाब अली बहादुर द्वितीय ने हिन्दुओं को संगठित करने का प्रयत्न किया।

vjktdrk i.k fLFkfr] vkfFkd d0;oLFkk vkj "kk'k.k

सन् 1803-04 में जब बाँदा के सभी प्रदेश अंग्रेजों के अधिकार में आ गये तब वहाँ विधिवत अंग्रेजी भाासन की स्थापना के लिए कैप्टन बेली की नियुक्ति बाँदा में गर्वनर जनरल के बुन्देलखण्ड के पॉलिटिकल एजेन्ट के रूप में कर दी गयी और भाासन की सुविधा के लिए बाँदा को दस परगनों में बांट दिया गया। ये परगने थे बाँदा, खानदेह, सिहोंडा, पैलानी, तिन्दवारी, अगवासी, दरसैंडा, तरौहा, छिबू और बदौसा।[1] बाँदा के इन प्रदेशों की स्थिति बड़ी ही खराब थी। पन्ना के राजा हिन्दूपत की मृत्यु (1776ई0) के पश्चात् पूरा का पूरा पूर्वी बुन्देलखण्ड जैसे रण स्थल बन गया था। पन्ना और जैतपुर के राज्यों में उत्तराधिकार के युद्धों ने लगातार खून–खराबों और मार–काट से स्थिति अराजकतापूर्ण बना दी थी। इसी बीच प्रथम मराठा युद्ध (1774-82 ई0) में लेजली–गौडार्ड के बुन्देलखण्ड के अभियान (1778ई0), महादजी सिंधिया के सरदार खांडेराव हरि के पूर्व बुन्देलखण्ड पर आक्रमण (1785-87), फिर तुरंत ही पश्चात् बुन्देलखण्ड में अली बहादुर के पदापर्ण और लगभग दस वर्श (1792-02) तक उसकी और हिम्मत बहादुर गोसाई की सैनिक कार्यवाहियों एवं अभियानों में सभी प्रशासकीय तथा आर्थिक व्यवस्था को चौपट कर दिया था।[2] ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक ही था कि अंग्रेज अधिकारी आते ही अमन–चैन की स्थापना के साथ ही बाँदा की आर्थिक व्यवस्था, और मुख्य रूप से मालगुजारी व्यवस्था की ओर ध्यान देते क्योंकि वह ईस्ट इंडिया कम्पनी के आर्थिक हितों से सब से अधिक संबधित थे।[3] इसलिए जान बेली, इरिस्किन, वाउचॉप, स्कॉट वेयरिंग, वालमी आदि सभी ने बाँदा के प्रदेशों के मालगुजारी बंदोबस्त की ओर सर्वाधिक ध्यान दिया, जिसके फलस्वरूप सन् 1804-05 से 1820-21 तक ही छह मालगुजारी व्यवस्थाएं या बंदोबस्त लागू किये गये। इन मालगुजारी बंदोबस्तों का मुख्य उद्देश्य अधिक से अधिक वसूली कर अंग्रेजी कम्पनी के कोशों को भरना था। अतएव अंग्रेज अधिकारियों में मालगुजारी बढ़ाने और उसकी वसूली करने की होड़ सी लग गयी। उदाहरण के

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

लिए, जो मालगुजारी सन् 1806-07 में रूपये 13,75,530 थी वह क्रमशः सन् 1814-15 में रूपये 14,94,908, सन् 1815-16 में रूपये 19,21,226 और सन् 1819-20 में बढ़कर रूपये 20,36,508 हो गई।[4] कहना नहीं होगा की मालगुजारी में यह वृद्धि रैयत और जमींदारों पर ज्यादातियों और जोर दबाव डाल कर ही की गयी थी। लगातार पड़ते अकालों, सूखों और काँस के प्रसार से उपजाऊ भूमि के विनश्ट हो जाने की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया गया और सभी प्रकार से रैयत का अत्यधिक भाोशण कर उसका जीवन दूभर कर दिया गया।

सन् 1809 से सन् 1830 के बीच के समय में अकालों, सूखों, अतिवर्शा और तूफानों–बवंडरों का क्रमशः चलता रहा था। काँस के असाधारण रूप से फैल जाने से उपजाऊ भूमि नश्ट होती गयी और उसे जोता नहीं जा सका। महामारियां अलग आफत बरपा कर रहीं थीं। फलस्वरूप पूरे बाँदा जिले में "आम दिवालिएपन" की स्थिति उत्पन्न हो गयी थी और देहात उजड़ने लगे थे।[5] मालगुजारी की किस्तों का भुगतान नहीं हो सका और सन् 1829–30 में बकाया मालगुजारी की राशि रूपये 4,19,076 की वसूली रह गयी।[6]

अगले दो तीन वर्शों में भी वैसी ही खराब रही। सरकारी मालगुजारी का भुगतान होने में असमर्थ होने के कारण पुराने काश्तकारों और जमींदारों में अपनी–अपनी जमींदारियाँ छोड़ दी और इस प्रकार 588 जमींदारियां और जायदादें सीधे सरकारी नियंत्रण में ले ली गयीं। इन जमींदारियों की आय बाँदा जिले की कुल मालगुजारी की दो–तिहाई से भी अधिक थीं।[7] सन् 1833–34 की सालें भी पूरे बुन्देलखण्ड में ही अकाल की सालें थीं। अगले वर्शों में भी स्थिति सुधरी नहीं। इसलिए सन् 1837–38 में मालगुजारी कम कर रूपये 14,19,869 कर दी गयी। इससे कुछ हालत बेहतर हुये और सन् 1842–43 तक मालगुजारी की रकम क्रमशः बढ़कर रूपये 15,24,177 कर दी गयी। सन् 1842–43 से अक्टूबर 1848 के बीच की पाँच सालों में जिले की आर्थिक स्थिति संभल न पाने के कारण मालगुजारी अधिक नहीं बढ़ायी जा सकी। सन् 1848 में बाँदा जिले की कुल मालगुजारी रूपये 15,85,890 से स्वीकृत हुयी थी।[8] पर फिर भी हालत ठीक होने के बजाय और बिगड़ती ही चली गयी। मालगुजारी न दे पाने के कारण लोगों ने अपनी जमीनें बेचना भाुरू कर दीं। बहुत से जमींदार अपनी जमीदारियाँ ही छोड़कर भाग गये। ओर उन्हें नीलामी बोली लगाकर ठेके पर उठा दिया गया। बाँदा में ही इस प्रकार 28 जमीदारियों को ठेके पर दे दिया गया। बाँदा के सिहुंड़ा परगने में पिछले वर्शों में अत्यिधिक मालगुजारी बढा देने से और काँस के प्रसार से लोग सबसे अधिक परेशान और दुखी थे। वहाँ के कई छोटे बडे जमीदार मालगुजारी के कर्ज नहीं पटा सके और उनकी जमींदारियों के बिकने की नौबत आ गयी। सिहुंडा में 184 जमीदारियां थीं। इनमें से 103 जो आधे से भी अधिक थीं, इस प्रकार खानदानी जमींदारों? के हाथें से निकलकर भूमि के सट्टेबाजों, साहूकारों और ऐसे ही मुनाफाखारों तथा सूदखोरों के पास पहुंच गयी।[9] उदाहरणार्थ, सन् 1857 के 'सिपाही विद्रोह' के समय बाँदा जिले की आर्थिक व्यवस्था पर गुजराती सेठ किशन चंद्र भयामकरण, स्थानीय खजांची का पुत्र सेठ उत्तम राम सेठ उदयकर्ण, फतहपुर दोआब के रस्तोगी बनिये, स्थानीय नाजिर जादोराम कायस्थ और तिरेही वंशानुगत कायस्थ कानूनगो आदि छा गये थे।[10] इन्हें खेती किसानी और भूमि विकास के सुधार में कोई दिलचस्पी नहीं थीं। किसानों और खेतिहर मजदूरों से उनके संबध वहीं तक थे, जहाँ तक वे उनका भाोशण कर अपनी तिजोरियाँ भर सकते थे। बाँदा के इलाकों के किसान अपढ़ होने के कारण लिखा पढ़ी, मुकदमों और अदालती तथा तहसीली कार्य वाहियों से भय खाते थे, जिससे पटवारियों और कानूनगोओं और तहसीलदारों की बन आती थी और वे साहूकारों से मिलकर मनमानी कागजाती कार्यवाहियाँ अपने पक्ष में करा लेते थे।[11] संक्षेप में, इस सबके कारण बाँदा के आर्थिक भाोशण की गति बहुत तेज हो गयी, जिसने इन वर्गों और उनके पृश्ठपोशक अंग्रेजी भाासन के विरूद्ध भयंकर असन्तोश और जन आक्रोश को जन्म दिया।

mtMrr m|kx&/kU/k

उपर्युक्त स्थिति का कुप्रभाव उद्योग–धंधों और स्थानीय तथा अंतर्देशीय व्यापार पर बिना पड़े कैसे रह सकता था। बुन्देलखण्ड की– जिस में बाँदा भी भाामिल है– आर्थिक व्यवस्था मुख्य रूप से कृशि प्रधान थी। जब कृशि ही चौपट हो जाये तो उसे से जुडे व्यवसायों और उद्योग धन्धों पर आँच आ ही जाती है। बाँदा में यही हुआ। आम गरीबी, बेकारी, असुरक्षा और अराजकतापूर्ण स्थिति में सभी उद्योग–धन्धे ठप से कर दिये। बाँदा और भोश बुन्देलखण्ड में 19वीं सदी के लगभग मध्य तक काफी कपास होती थी और यहाँ की रूई अपनी बढ़िया किस्म के लिए बडी प्रसिद्ध थी। पर सन् 1829–30 तक अमेरिकन रूई के अंतर्राश्ट्रीय बाजार में छा जाने से तथा उसकी खपत इंग्लैण्ड में बढ़ जाने से भारत की रूई की माँग धीरे–धीरे एकदम कम हो गयी और उसके भाव तेजी से गिरना भाुरू हो गये।[12] बुंदेलखण्ड के कपास–उत्पादन और रूई उद्योग पर इस का घातक प्रभाव पड़ा। कपास की खेती अब आर्थिक दृश्टि से लाभप्रद नहीं रही और जितनी कृशि–योग्य भूमि पर उस की खेती होती थी उसका अनुपात कम होने लगा। बाँदा इसका अपवाद नहीं था। सन् 1842 में बाँदा में कपास की खेती की जाने वाली भूमि का अनुपात केवल 24–25 प्रतिशत रह गया।[13] यह प्रतिशत बराबर गिरता ही गया। माँग के अभाव तथा भावों की गिरावट से बाँदा में कपास की खेती लगभग समाप्त हो गयी और कपड़ा उद्योग बैठ सा गया। जुलाहों, रंग–रेजों और छीपियों में बेकारी घर कर गयी और कपड़े के सामान्य व्यापारी और दलाल हाथ–पर–हाथ रखे बैठे रहने लगे।

fl ikgh i:'kk ykxk et cdkjh

सन् 1804 और 1817–18 के बीच बुन्देलखण्ड के सभी राजे–रजवाड़े अंग्रेजी सरकार से समझौते एवं संधियां कर उन की दासता के पाश में बंध चुके थे।[14] इन समझौतों और संधियों में बुन्देलखण्ड के भाासकों की सैन्य भाक्ति सीमित कर दी थी। वे केवल अब उतनी ही सेना रख सकते थे, जितनी की उन की सामान्य आन्तरिक व्यवस्था बनाए रखने और राजस्व की वसूली के लिए आवश्यक थी। फिर चूंकि अंग्रेजी सरकार ने उन्हें उनके राज्य की आन्तरिक सुरक्षा करने पर किसी भी आक्रमण से बचाने की गारण्टी दे दी थी, इसलिए अब उन्हें कोई अच्छी बडी स्थायी सेना रखने की आवश्यकता नहीं रह गयी थी। अस्तु, बुन्देलखण्ड के सभी राजे–रजवाडों में अपने फालतू सैनिकों की छंटनी कर दी जिसके फलस्वरूप सैकडों सैनिक बेकार हो गये। पेशेवर सैनिक होने के कारण उनके लिए भाान्तिकाल के छोटे–मोटे रोजगार–धन्धे अपनाना कठिन था। फिर जैसा कि पहले बताया जा चुका है, बुन्देलखण्ड में कृशि–योग्य भूमि की कमी और सिंचाई के साधनों के आभाव के साथ ही 19वीं सदी के प्रथम अर्धांश में जो अकाल, सूखे, अतिवर्शा और काँस के प्रसार का एक अटूट क्रम–सा चल पड़ा था, उसने सम्पूर्ण प्रदेश में आम भूखमरी और बेकारी की स्थिति उत्पन्न कर दी थी। इस स्थिति में निकाले गये बेकार सैनिकों का खपना और भी कठिन हो गया था। फलस्वरूप उनमें से बहुत से पिंडारी, डाकू और ठग हो गये। बुन्देलखण्ड के बाँदा के प्रदेश उन की कार्यवाहियों के क्षेत्र और अड्डे बन गये। उनकी कार्यवाहियों में सामान्य जन–जीवन और आवागमन भी असंभव और असुरक्षित कर दिया। बाँदा के पास चिल्ला घाट[15] और उस से लगा भू–भाग वहाँ होने वाली अत्यधिक लूट–पाट और हत्या के कारण बुरी तरह बदनाम हो गया।[15] स्थानीय और अन्तर्प्रदेशीय व्यापार चौपट हो गया। इस घोर अराजकता और अशान्ति से आंतकिक हो कर बाँदा जिले के बहुत से लोग अपने घर–बार छोड़ जीविका की तलाश में अन्यत्र चले गये।

उपर्युक्त कारणों से बाँदा जिले की आबादी 1853 ई0 तक इतनी कम हो गयी की वहाँ के अंग्रेज अधिकारियों तक को चिन्ता हो उठी और अपनी जनगणना की रिपोर्ट में भाासन का ध्यान इस ओर आकर्शित करते हुए उन्होनें लिखा, "बाँदा को जिस एक ओर विपत्ति से जूझना पड़ रहा है, वह है कृशि

योग्य भूमि की तुलना में आबादी की कमी, माँग जोतने के लिए अधिक एकडों की नहीं, अपितु हल चलाने के लिए सबल भुजाओं की है।"[17]

b.lkb iknfj;k dk vkxeu vkj b.lkb /ke dk çpkj

ऐसे ही समय अंग्रेजी सरकार और उसके अधिकारियों की प्रेरणा से ईसाई मिशनरियों का पदापर्ण बाँदा जिले में हुआ। उनके धर्म–प्रचार के तौर–तरीकों से धर्म–भीरू हिन्दु और मुसलमान, सभी आशक्ति हो उठे। ईसाई पादरियों को अंग्रेज अधिकारियों से जो प्रोत्साहन और संरक्षण मिलता था, वह भी उन्हें खटकता था। बाँदा में सन् 1850 के आस–पास के लगभग 125 मकतब और पाठशालाएँ हुईं। इनमें सामान्य हिन्दी, उर्दू, संस्कृत, अरबी, फारसी आदि पढ़ायी जाती थी। ईसाई पादरियों ने अब शिक्षा में भी दखल दिया। व्यक्तिगत रूप से वे जो कुछ ईसाई धर्म की शिक्षा–दिक्षा देने का प्रयत्न करते थे, वह उन्हें काफी नहीं लगा और अंग्रेज अधिकारियों के बढ़ावे पर अमेरिकन प्रेसबिटेरियन मिशन में सन् 1856 में एक मिशन स्कूल खोल दिया। यह एक मि0 पाल की देख–रेख में चलने लगा। बाँदा के निकटवर्ती कस्बों, तिन्दवारी, सिहुंडा, कालिंजर, तरहुँवा (तरौंहा), कमासिन आदि में भी ईसाई प्रचारको की गतिविधियां बढ़ने लगी। बाँदा में मिशन चर्च पहले ही स्थापित हो चुका था। बाँदा के तत्कालीन कलेक्टर एफ0 ओ0 मेन से चर्च और मिशनरियों को बराबर प्रोत्साहन मिल रहा था। जिससे उनका रवैया अधिक उग्र और उत्तेजनापूर्ण होता जा रहा था।[18] सती प्रथा के अन्त को लेकर लोग पहले से ही आन्दोलित थे। अब विधवा विवाह को वैध करने और ईसाई धर्म के प्रभाव को सहज करने के उद्देश्य से प्रेरित धर्म–परिवर्तन के पश्चात् धर्म–बदलुओं को अपनी पैतृक संपत्ति में भाग पा सकने के कानून बन जाने से जन–साधारण की परम्परागत धार्मिक और सामाजिक आस्थाओं को गहरी चोट पहुंची।[19] सन् 1857 के "सिपाही विद्रोह" के इस धार्मिक पहलू के महत्व को स्वीकार करते हुए सुप्रसिद्ध इतिहासकार डॉ0 रमेश चन्द्र मजूमदार का यह कथन तथ्यसम्मत है कि "निस्संदेह इन शिकायतों में उनको सबसे गम्भीर शिकायत थी, पुराने समय से चले आये धार्मिक रीति–रिवाजों और सामाजिक तौर–तरीकों एवं परम्पराओं में हस्तक्षेप! किसी न किसी तरह उनमें से बहुतों के मन में यह गहरी भावना जड़ पकड़ गयी थी कि अंग्रेजों का समझा–बूझा उद्देश्य उन्हें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष तरीकों से ईसाई धर्म में दीक्षित करना है।"[20]

folyo dh fpUxkjh

बाँदा में इस तरह जब स्थिति विस्फोटक होती जा रही थी, तभी अंग्रेज अधिकारियों द्वारा भारतीय सैनिकों को सुअर और गाय की चर्बी लगे कारतूस दिए जाने की अफवाहें तेज से सेना में फैलने लगी ये अफवाहें निराधार नहीं थीं। वे जनवरी 1857 में कलकत्ते से 5 मील उत्तर दमदम की छावनी में एक निम्नजाति के खलासी और ब्राहम्ण सैनिक की आपसी बातचीत और तानेबाजी से भुारू हुई और वहाँ से भीघ्र ही 15 मील दूर बैरकपुर और बरहामपुर की छावनी तक जा पहुंची।[21] वहाँ की 34वीं नेटिव इन्फेंट्री के हिंदुस्तानी सिपाही इन अफवाहों से भड़क उठे। उन्होंने लुके छिपे कुछ सरकारी इमारतों और यूरोपियन अधिकारियों के बंगलों मे आग लगा दिया। बैरकपुर के अंग्रेज कमाडिंग अधिकारी हिअरसे ने डरा–धमका कर सैनिकों पर काबू पाना चाहा, पर आग सुलगती रही। 34वीं नेटिव इन्फेट्री का एक ब्राहम्ण सिपाही मंगल पाण्डे और अधिक तनाव बरदाश्त नहीं कर सका। वह 29 मार्च 1857 को उत्तेजना में बाहर निकलकर अपने साथियों को धर्म के नाम पर यूरोपियनों से मोर्चा लेने को ललकारने लगा। एक लेफ्टिनेंट बफ के बाहर आने पर पाण्डे ने उस पर गोली चला दी और गोली चूक जाने पर तलवार लेकर उस पर पिल पड़ा। तभी यूरोपियन सैनिकों ने उसे घेर लिया। मंगल पाण्डे से स्वयं को निस्सहाय पाकर अपने उपर ही गोली चला ली। पर बच गया। उस पर मुकदमा चला। उसे मृत्युदण्ड देकर फाँसी दे दी गयी और उसकी 34वीं नेटिव इन्फेंट्री सेना को भंग कर दिया गया।[22]

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

मंगल पाण्डे की भाहादत व्यर्थ नहीं गयी। बैरकपुर से 1857 के विपल्व की जो चिंगारी उड़ी उसने उत्तरी भारत मे भीघ्र ही दावाग्नि का वह भयंकर रूप धारण कर लिया जिसमें अंग्रेजी साम्राज्य झुलसकर अपनी अंतिम सांसे गिनने लगा। मार्च 1857 के अन्त से जून '57 के मध्य तक के ढाई महीने में अम्बाला, मेरठ, दिल्ली, लखनऊ, कानपुर, अलीगढ़, इलाहाबाद और अवध तथा उत्तरी पश्चिमी सीमा प्रान्त (आधुनिक उत्तर प्रदेश) के इटावा, मैनपुरी, रूड़की, मथुरा, बरेली, भााहजहाँपुर, फैजाबाद, फतेहपुर, फतहगढ आदि सभी जिले इसकी लपेट में आ गये। बुन्देलखण्ड की अंतिम आहुति के बिना यह क्रान्ति–यज्ञ भला कैसा पूरा होता। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, बाँदा का नवाब अली बहादुर (द्वितीय), बानपुर का बुदेला राजा मर्दनसिंह और भााहगढ़ का राजा बख्तबली, सभी जीवन का मोह त्याग कर इस यज्ञ में कूद पड़े और जाते–जाते बुन्देलखण्ड के इतिहास में जो अंतिम स्वर्ण–पृश्ठ जोड़ गये, वह अगले अध्यायों का सार–संक्षेप है।

1857 के संग्राम के समय क्रांतिकारियों का मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालते हुए बहादुर भााह ने घोशणा की जिसका बाँदा क्रातिकारियों पर विशेश प्रभाव पड़ा "हिन्दुस्तान के हिन्दुओं और मुसलमानों उठो! भाइयों उठो!! इस पाक जंग में भारीक होने वाले सब आपस में भाई–भाई हैं। उनमें छोटे–बडे का कोई फर्क नहीं है। मैं अपने तमाम हिन्दी भाइयों से दरख्वास्त करता हूँ कि खुदा के बताये हुये दस पाक फर्ज को पूरा करने के लिए मैदान–ए–जंग में कूद पड़े। (भागवान दास केला, भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन सन् 1857–1947, पृ0 19,20)

I UnHkk&

1. बाँदा, इस प्रकार बुंदेलखण्ड के अंग्रेजी जिले में सन् 1819 तक रहा। इस के पश्चात् उसे दक्षिणी बुंदेलखण्ड का एक अलग जिला बना दिया गया और बाँदा उस का मुख्यालय हो गया।(बुंदेलखण्ड गजे0, पृ0 130।)
2. सरदेसाई, भाग 3, पृ0 69,73,78, 79। सरकार, भाग–3, भाग–4। पन्ना गजेटियर, पृ0–11–14।
3. इस बीच इंग्लैण्ड की पार्लियामेण्ट ने सन् 1803 सन्1833 के चार्टर एक्टों द्वारा ईस्ट इण्डिया कम्पनी के भारत व चीन के व्यापारिक एकाधिकार को समाप्त कर दिया। इससे कम्पनी को बड़ी आर्थिक क्षति पहुँची थी जिसके पूर्ति के लिए उसने प्रादेशिक प्रसार और अधिकारिक आर्थिक भाोशण की नीति अपनायी थी। (दी इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, रोमेशदत्त, भाग–1, पृ0 8–11)
4. बुंदेलखण्ड गजेटियर, पृ0–123।
5. बाँदा गजेटियर, पृ0 63 ; बुंदेलखण्ड गजेटियर, पृ0 123।
6. बाँदा गजेटियर, पृ0 63।
7. बुंदेलखण्ड गजेटियर, पृ0 124।
8. वही।
9. वही।
10. बाँदा गजेटियर, पृ0 109, 110; बुंदेलखण्ड गजेटियर पृ0 114–15।
11. यही कारण है कि सन् 1857 के विद्रोह में केवल बाँदा में ही नहीं अपितु झाँसी और अंग्रेजी भाासन के अन्तर्गत अन्य प्रदेशों में सब कहीं विद्रोह शुरू होते ही पहले तहसीलों, सरकारी खजानों, जेलों और अदालतों पर आक्रमण किये और वहाँ के कागजातों को नश्ट कर दिया।
12. इण्डिया टुडे, आर0 पी0 दत्त, पृ0 78।

13. बाँदा गजेटियर, पृ0 49।
14. एचिसन, भाग 5, पृ0 47–220।
15. चिल्लाघाट–केन और यमुना के संगम पर, बाँदा–फतहपुर मार्ग पर।
16. सन् 1948 की इंडियन हिस्ट्री कॉंग्रेस के दिल्ली अधिवेशन की प्रोसीडिंग्स में डा0 हीरालाल गुप्त के "एंग्लिम्प्स इन टू दी ठगी पेपर्स इन दी सागर रिसीप्ट्स ऐंड इशूज ऑफ दी मिसलैनिअस सेक्शन ऑफ दी फॉरेन डिपार्टमेंट" भीर्शक के लेख के पृ0 220–21।
17. बाँदा गजेटियर, पृ0 86।
18. बाँदा गजेटियर, पृ0 52।
19. ये कानून थे, हिन्दू पुर्नविवाह एक्ट(1856)।
20. आर0 सी0 मजूमदार, कलकत्ता, 1957, पृ0 172।
21. वही, पृ0 41–44।
22. मजूमदार, पृ0–44–47।